अल्पसंख्यकवाद की नीति अंग्रेजों की देन है

भारत की प्राचीन कौम हिन्दु आबादी आज जहां अपने ही देश में अल्पसंख्यकवाद से भयाक्रांत है, वहीं वैश्विक धरातल पर अल्पसंख्यकवाद की शिकार है और अपनी सांस्कृतिक स्वतंत्रता पर यूरोपीय नीति का दमन झेल रही है। इटली के मैक्यावेली (1469 ई0 से 1527 ई0) के शासकीय दर्शन 'राजनीति और धर्म को अलग-अलग रहना चाहिए' के अधीन चलने की बाध्यता यदि विश्व में कहीं लागू है तो वह केवल हिन्दुओं पर ही लागू है।

इस मैक्यावेली अवधारणा को लागू करने की कमान हमेशा उस ब्रिटिश सत्ता के हाथ में ही रही जिसे ईसाईयत का संरक्षण प्राप्त है। विश्व के मुसलमानों ने मैक्यावेली के इस दर्शन को कभी स्वीकार नहीं किया। वो राजनीति को धर्म के अधीन रखना चाहते हैं। पूरी ईसाई दुनिया अपनी राजनीति को धर्म के सहयोग से विकसित कर रही है। मुसलमानों की राजनीति धर्म के नाम पर आज तलवार नहीं तो बंदूकों और बमों की राजनीति बन गई है। उन्हें पाकिस्तान में हिन्दु मंदिरों को तोडकर मस्जिद बनाने की आजादी प्राप्त है और यह आजादी उसे ब्रिटिश साम्राज्य ने दी हैं। लेकिन हिन्दु भारत में किसी मस्जिद की जगह पर एक मंदिर बनाने के लिए भी आजाद नहीं है, क्योंकि वह राजनीति और धर्म को अलग-अलग रखने के लिए बाध्य हैं। ऐसी बाध्यता निस्संदेह ब्रिटिश राज्य की देन है जो वास्तव में हिन्दु समुदाय को वैश्विक आबादी का अल्पसंख्यक मानती है।

वैश्विक धरातल पर अल्पसंख्यकवाद की ऐसी राजनीति का प्रारंभ ब्रिटिश साम्राज्य ने किया, जिसका सबसे ज्यादा कुप्रभाव हिन्दु आबादी पर ही पडा है और पड रहा है।

ब्रिटिश राज का जन्म

विश्व इतिहास में 'ब्रिटिश साम्राज्य' का जन्म 24 सितंबर 1599 ई0 को उस समय हुआ जब ब्रिटेन के तकरीबन 200 व्यापारिंयो और सामंतो ने पूर्वी देशों से व्यापार करने की योजना बनाई। लक्ष्य साधने के लिए बाजावता "गर्वनर ऑफ कम्पनी ऑफ मर्चेन्ट्स ऑफ लंदन ट्रेडिंग इन्टू दि ईस्ट इंडीज" नामक एक कम्पनी बनी, जिसे 31 दिसम्बर 1600 ई0 के दिन महारानी ऐलिजाबेथ-1 ने 'इग्लिश रॉयल चार्टर' शीर्षक से एक 'इजारा' जारी करते हुए कई प्रकार के अधिकार प्रदान किए।

उस समय भारत का समुद्र व्यापार, पूर्तगालियों के हाथ में था। उन्होंने 'गोवा' में अपना किला बना लिया था। भारत में मुगल शहंशाह जहागीर की हुकूमत थी। उसकी अनुमति से कम्पनी ने 1615 ई0 में पूर्वी तट पर 'सोली पट्टम' में कारखाना खोला और धीरे-धीरे पूरे भारत में उनके केन्द्रों की श्रंखलाएं स्थापित हो गईं। ब्रिटिश व्यापारियों ने 1634 ई0 में बंगाल, 1640 ई0 में हुगली कलकत्ता और 1662 ई0 में मुम्बई तटों पर अपना केन्द्र स्थापित किया। देश के बडे और महंगे शहरों में उन्होंने अपनी कोठियां बनवाई, और देश के 50 प्रतिशत व्यापार पर अपना कब्जा बना लिया। 1700 ई0 तक ब्रिटिश व्यापारियों ने 'साहुकारी' का भी धंधा शुरू कर दिय। पहले छोटे-छोटे रजवाडों पर हमला करते, और बाद में मुसीबत से उबरने के लिए उन्हे एक खास राशि कर्ज देने का अनुबंध करते। फिर ऋण की राशि आगामी तिथियों में देने का आश्वासन देकर उन्हें शांत कर देते। लेकिन अगले ही महीने ऋण की अनुबंधित राशि का ब्याज लेने पहुंच जाते। जो नहीं देता उसे बंदूक की नोक पर सत्ता से बेदखल कर

देते और चर्चित रजवाडों के किसी अन्य सामंत से एक मोटी राशि लेकर उसे राजा बना देते। नया सामंत भी प्रतिवर्ष लाखों का लगान चुकाता, वरना तीसरे की बारी आतीं।
1706 ई तक भारत में रहने वाले ब्रिटिश व्यापारियों ने ब्रिटिश राज्य को इतना बडा धनपति बना दिया था कि इंग्लैंड और इस्कॉटलैंड ने मिलकर एक समझौते अंतर्गत 'यूनाइटेड किंगडम ऑफ ग्रेट ब्रिटेन' की बुनयाद डाली और व्यापार के माध्यम से एक बडे भू-भाग पर कब्जा जमाता हुआ अमेरिका तक फैल गया। 1700 ई0 तक कर्नाटक और बंगाल का सम्पूर्ण खजाना ब्रिटेन पहुंच गया था। रजवाडो और जन्ता के बीच हिन्दु मुस्लिम वैमनस्य का बीज बो कर धन सम्पदा की फसल काटने का सिलसिला चलता रहा। कम्पनी द्वारा पोषित सेना कभी मुस्लिम तो कभी हिन्दु सामंतो की सहायता के नाम पर रजवाडों को लूटती रही। इसी वर्ष ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अपना विधान लागू किया।

ईसाइयत और ब्रिटिश राज

'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटिनिका' के अनुसार भारत में ईसाइयत ने सन् 52 ई0 में प्रवेश किया। संत थॉमस कुदंगल्लुर (केरल) पहुंचे और उन्होंने तमिलनाडू और केरल में सात चर्चों का निर्माण किया। माना जाता है कि उन्होंने चैन्नई में शहादत पाई और वहीं संत थॉम कैथेडरिल में दफनाए गए। संत् फ्रांसिस एक्जिवियर्स (1506 ई0-1552 ई0) ने भी बडे पैमाने पर धर्मांतरण किया। 1545 ई0 में पुर्तगाल के राजा 'जॉन तृतीय' को पत्र लिखकर गोवा में धार्मिक न्यायपीठ (Inquisition) की स्थापना के लिए आवेदन किया, जो उनकी मृत्यु के आठ वर्षों के बाद 1553 ई0 में शुरू हुआ, लेकिन केवल हिन्दुओं और यहूदियों के खिलाफ निरंतर हिंसा के कारण बदनाम भी हुआ। न्यायपीठ उन नवीन ईसाइयों को हिंसात्मक दंड देता जो धर्मातरण के बावजूद अपनी संस्कृति से जुडे रहे। इसाईकरण के अभियान में पिछडी जाति के हिन्दुओं को वरगलाने की परम्पर आज भी जारी है। 16वीं और 17वीं शताब्दी में दक्षिण भारत और उत्तर पूर्व के छेत्रों में हिन्दू धर्म संस्कृति के खिलाफ वैचारिक और व्यवहारिक अभियान भी चलाए गए। 'ग्रेट ब्रिटेन के ऐशियाई विषय'-1796 ई0 का अवलोकन करने के बाद 'चार्ल्स ग्रांट' ने अपनी एक टिप्पणी में कहा था- "प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति" को आदरणीय कैसे मान लूं? जबकि हिन्दू आबादी भ्रष्ट और दूष्चरित्र है।

ब्रिटिश नीति और भारत के धर्म समूह

1781 ई0 में वारेन हेस्टिंग्स ने कलकता में मदरसा आलिया की स्थापना की, जहॉ फारसी, अरबी और मुस्लिम कानून की शिक्षा में 'स्नातक' की उपाधि देकर ब्रिटिश नौकरशाहों के अधीन अथवा न्यायालों में नियुक्त किया जाता था। ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रथम गर्वनर जनरल वारेन हेस्टिंग ने बाद में वहां ज्योतिष, तरकशास्त्र, दर्शन शास्त्र, गणित, ज्यमिति, व्याकरण, आदि विषयों की शिक्षा शुरू की और 1827 ई0 में चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा प्रारंभ की। यह संस्थान सीधे अंग्रेजों द्वारा संचालित था, और मुसलमानों को सम्मानजनक रूप् से आधुनिक विकासधारा में शामिल कर रहा था। कोकत्ता में ही सन् 1800 ई0 में अंग्रजों ने फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की और कई हिन्दू-धर्म ग्रंथों की अंग्रेजी व्यख्या करते हुए हिन्दु धर्म-सस्कृति को मिस्र और यूनान की प्राचीन संस्कृति का भोंडा संस्करण प्रचारित किया।

ईसाई मुस्लिम समन्वय

ईसाई और मुस्लिम दोनों कौमें एक ईश्वर में आस्था रखती हैं, लेकिन हिन्दू आबादी बहुदेववादी है। दूसरे यह कि ईसाई और मुस्लिम अपने-अपने धर्म ग्रंथों (बाईबल और कुरआन) के आधार पर एक दूसरे के अस्तित्व की पुष्टि करते हैं तीसरा कारण है कि इन दोनों धार्मिक समूहों के अवतार हजरत ईसा और हजरत मोहम्मद सल्लम के पितामाह एक ही हजरत इब्राहीम हैं, चौथा कारण यह है कि ब्रिटेन और उसके सभी सहयोगी देशों के इर्द-गिर्द मुस्लिम देशों की बहुतायतहैं, जिनसे तेल व्यापार का एक रिश्ता बना हुआ है और उस रिश्ते में खटास पैदा करना हानिकारक हो सकता है। पांचवां और अंतिम कारण है कि मुसलमानों और ईसाईयों के बीच 'क्रूसेड' या 'सलीबी' जंग को मूल कारणों 'अर्थनीति' और 'युध्द नीति' में मतभेद आज 2009 ई0 में भी यथावत है। इसलिए दोनों का समन्वय बना रहा।

हिन्दू अल्पसंख्यक

'ब्रिटिश साम्राज्य' ने अपने भौगोलिक विस्तार-वाद के अंतिम चरण में वैश्विक भू-भाग की एक चौथाई जमीन यानि एक करोड तीन लाख वर्गमील या तीन करोड 36 लाख 70 हजार किलामीटर लंबी भूमि पर राज किया। दुनिया की एक चौथाई आबादी उसके आधीन थी। यहां तक की 1783 ई0 तक अमेरिका भी उसका गुलाम था। उस समय 'ब्रिटिश साम्राज्य' को अपने अधीनस्थ भू-भाग में 'हिन्दू' ही अल्पसंख्यक दिखाई दिए। अंग्रेजों ने हिन्दू धर्म संस्कृति को समाप्त करने के लिए उनके धर्म ग्रंथों की आलोचना लिखी जिसके कारण हिन्दुओं का एक बहादुर जत्था सिख पंथ की ओर चला गया। मुसलमान भी अनेक अवसान में रूचि रखते थे। लिहाजा दोनों ने एक गुप्त समन्वय के अंतर्गत 'हिन्दू' धर्म एवं हिन्दू-कर्म विधान की भर्त्सना और उपेक्षा शुरू कर दी। 1857 ई0 में चर्बी कांड से दुखी हिन्दू विरोध में खडे हुए तो उन्हें मंगल पांडे सहित पेडों पर सरे बाजार फांसी दे दी गई।

सिख अल्पसंख्यक

हिन्दू मुस्लिम सहिष्णुता, जहां मुगल सम्राट अकबर के शासन काल (1556 ई0-1605 ई0) में जितनी मजबूत हुई थी, औरंगजेब के शासन काल (1658 ई0-1707 ई0) के बीच उतनी ही कमजोर और विकृत हुई। औरंगजेब ने 'इमाम अबू हनीफा' के प्राचीन फतवों को लागू करते हुए और तुर्क समुदाय को 'राफजी'(झूठा) करार दे दिया। सहिष्णुता टूटी तो, बाबा फरीद गंज शकर , हजरत निजाम्मुद्दीन, गरीब नवाज ख्वाजा मोइनुददीन चिश्ती आदि मुसलमान सुफी संतों द्वारा चलाए जा रहे भक्ति आंदोलन के मात्र हिन्दू प्रचारक गुरूनानक देव ने तलवारों से धार्मिक मुल्य तय करने वाली 'मुगल सत्ता' के सामने 'बका-ए-बशरियत' का इस्लामी फलसफा पेश किया और 'सिर्फ अच्छे अमल' या अच्छे कर्म से धार्मिक मुल्य तय करने की प्रेरणा दी, ताकि मानवता जिवित रहे। मुझे गुरू गोविंद जी की पंक्तियां याद आ रहीं हैं:

हिन्दू, तुरक, कोउ, 'राफजी', इमाम शाफई
सब मानस की जात पिचानों अनन्तकाल तक

'इमाम शाफई' के मुताबिक, दुनिया के तमाम इंसान अल्लाह के बन्दे हैं, और सबको जिन्दा रहने का हक है, मुआफ करना, सजा देने से ज्यादा अफजल है। पैगम्बर-ए-इस्लाम ने 'बका-ए-बशरियत' के इस फलसफे को 'मक्का विजय' के मुबारक मौके पर पेश किया था और मक्का के बागी यहूदी सरदार अबुसुफियान को माफ करके अपने कर्म से साबित भी कर दिया। उनके बाद मुसलमानों ने इसी

फलसफे को भुला दिया, और सिर्फ तलवार से 'जिहाद' को अपना फर्ज माना। पैगम्बर-ए-इस्लाम हजरत मोहम्मद के बाद दुनिया में यह पहला मौका था, कि 'गुरू नानक' ने अरब के बाहर किसी 'मुस्लिम साम्राज्य' में इस फलसफे का बीजारोपण किया।

गुरू नानक के विचारों ने 'लाहौर' के एक पेशेवर जंगजू समुदाय को ज्यादा प्रभावित किया, जो बारह टुकडियों में बटे हुए थे, और विभिन्न राज्यों में, 'विशिष्ट सेना' के रूप में काम कर रहे थे, 'रणभुमि' से बाहर वह शत्रुओं से भी प्रेमपूर्वक मिलते थे। अमृत्सर अफ्गानिस्तान के संस्थापक अहमद शाह अब्दाली और नादिर शाह के हमलों से बचाने के बाद इस 'बहादुर समुदाय' के धार्मिक विचारों, और राजनीतिक शक्तियों को अन्य धार्मिक समुदायों के मुकाबले में बेहतर रेखांकित किए जाने लगा। 1762 ई0 में अपार जन समर्थन के कारण 'सिख खालसा सेना' पृथक सांस्कृतिक अंदाज में अपना एक राज्य क्षेत्र बना लिया, 1716 ई0 से 1799 ई0 के बीच खालसा आर्मी ने 'मुगल शक्तियों' को गंभीर रूप से कमजोर किया था। धीरे-धीरे उनका राज्य क्षेत्र पश्चिम में 'खैबर पास' तक, उत्तर में कश्मीर तक, दक्षिण में सिंध तक और पुरब में तिब्बत तक फैला हुआ था। 1801 ई0 में यह राज्य 'सिख इम्पायर' के नाम से मशहूर हुआ जिसका नक्शा 'पंजाब' था। इस राज्य में 10 प्रतिशत सिख और 10 प्रतिशत हिन्दुओं के साथ 80 प्रतिशत मुसलमान थे।

सिख एम्पायर के महाराजा रंजीत सिंह ने मुगल और अफगानों के खिलाफ 'दल खालसा' नाम से एक भारतीय समूह तैयार कर लिया था, जो भारत की राष्ट्रीय अस्मिता और शांति और मानवता को अक्षुण्ण रखना चाहता था। और बाहरी ब्रिटिश शासकों के लिए भी खतरा बनता जा रहा था। यही कारण था कि 1839 ई0 में महाराजा रंजीत सिंह की मृत्यु के बाद तत्कालीन गवर्नर-जनरल लॉर्ड ऑकलैंड ने प्रथम आंगल-सिख युध्द की साजिश रचि और पांच नदियों झेलम, रावि, सतलज, व्यास और चनाव के इस प्रदेश पंजाब को अपने आधीन कर लिया।

इस घटना ने भी यह सिद्ध किया कि ब्रिटिश शासको ने हिन्दु समर्थक अल्पसंख्यक सिखों के राजनीतिक अधिकार छीन कर मुसलमानों को ही मजबूत किया। अब आइए ब्रिटिश राज द्वारा 'हिन्दू विरोध' या हिन्दू विचारधारा को अप्रासंगिक साबित करने की घटनाओं पर एक नजर डालें।

ब्रिटिश राज का हिन्दू विरोध

इंडियन नेश्नल कांग्रेस के मंच से 1879 ई0 में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने राष्ट्रीय हिन्दू संस्कृति की अस्मिता के लिए संघर्ष शुरू किया। अंग्रेजों ने उन्हें 1908 ई0 में कारागार में डाल दिया। जेल में तिलक ने दो किताबें लिखीं-'THE ARCTIC HOME OF THE VEDAS' (वेदों का सनातन घर) और 'गीता रहस्य'। लेकिन एशियाटिक सोसाईटी कोलकाता के प्रिय लेखक शिरोल ने तिलक को 'भारतीय असंतोष का जनक' (TILAK: THE FATHER OF INDAIN UNREST) कह कर उन्हें बौध्दिक रूप से खारिज कर दिया।

ऐसी अनेक घटनाएं हैं जिनका विस्तृत उल्लेख करना यहां संभव नहीं है। ब्रिटिश राज द्वारा हिन्दुओं की उपेक्षा इतनी बढ गई और इससे मुसलमानों को इतना बल मिला कि वह इस्लाम के नाम पर अलग-देश पाकिस्तान बनाने की मांग लेकर खडे हो गए। यहां तक की 1925 ई0 में राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ का गठन हुआ। और हिन्दुओं की वैचारिक अस्मिता की व्याख्या करते हुए वीर-सावरकर ने ''हिन्दुत्व': हिन्दू कौन है?" नामक पुस्तक लिखकर ब्रिटिश सरकार को बताया कि हिन्दुत्व भारत की सांस्कृतिक विचार धारा है तथा जैन, बौध्द एवं सिख आदि इनके अंश हैं इसी क्रम में सावरकर ने 23 जनवरी 1924 ई0 को रत्नागिरी ''हिन्दू-सभा" की स्थापना की और बताया कि भारत ही उनके लिए

प्राचीन काल से मातृभूमी और धर्म भूमी दोनों है। लेकिन इब्रहीमि धर्मों इसाई और इस्लाम की' के समन्वय ने सावरकर को अराजक करार दिया और जेल में डाल दिया।

ब्रिटिश राज की इस नीति को संतुलित करने के लिए 1925 ई0 में डा0 केश्वबलिराम हेडगेवार ने नागपुर में "राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ" की स्थापना की, जिसके द्वितीय सर संघ चालक माधवराव सदाशिव राव गोलवलकर ने प्रतिपादित किया की- इस्लाम और इसाईय्त एक इश्वरवादी हैं। जहां मोक्ष के लिए केवल एक ही रास्ता है। लेकिन हिन्दू समाज बहुदेववादी है। जहां मोक्ष के लिए अनेक मार्ग हैं। आर.एस.एस और हिन्दू-महासभा सहित और भी कई संगठन सामने आए। और तकरीबन एक हजार साल के बाद भारत में हिन्दुत्व की अपनी वैचारिक्ता को दिशा मिलने लगी। यह ब्रिटिश शासकों को मंजूर नहीं हुआ, उन्होंने एक दूसरी चाल चली। और मैक्यावेली शासन प्रणाली की स्थापना के लिए कार्लमाक्र्स के साम्यवादी दृष्टिकोण को भारत में प्रवेश दिया जो चार्ल्स डारविन के भौतिकवाद पर आधारित कार्ल माक्र्स की साम्यवादी अवधारणा के नाम पर धर्म का विरोध करें। इस काम के लिए उन्होंने जब्बाद खैरी और सज्जाद जहीर जैसे मुसलमानों एवं आनंद नारायण मुल्ला और मुंशी प्रेमचंद जैसे लोगों का इस्तेमाल किया।

1935 ई0 में प्रगतिशील आंदोलन के नाम पर साम्यवादी अवधारणा का पोषण शुरू करने वाले हिन्दू और मुसलमान दोनों ने यूरोप की आधुनिक ज्ञानधारा को सर्वोपरि और इंसानों के लिए बेहतर बताया लेकिन अपने पूरे आचरण में कोई एक साम्यवादी कहीं बैठा हो या दस सब ने एक स्वर से धर्म की उपेक्षा की, धर्म को अफीम बताया, और नयी पीडियों को धर्म से अलग नए भौतिकवादी रास्ते पर चलने की प्रेरणा दी। विडंबना यह है कि कोई भी मुसलमान साम्यवादियों के इस झांसे में नहीं आया और अंतत: उसने इस्लाम के नाम पर अलग देश पाकिस्तान बनाने की मांग कर ली, जिसे ब्रिटिश सरकार ने स्वीकार भी कर लिया। पाकिस्तान बन गया। उसे सांस्कृतिक आजादी मिल गई।

विभाजन के बाद पाकिस्तान में साम्यवाद घुसा, लेकिन अजीम शायर फैज अहमद फैज द्वारा व्यापक समर्थन के बावजूद वहां टिक नहीं सका, भारत में साम्यवाद टिक गया। मुसलमान भी उनसे प्रभावित हुए कई लोग धर्म को अफीम मानने के लिए तैयार हो गए। साहिर लुधियानवी, अली सरदार जाफरी, जां निसार अख्तर, मजाज, मख्दमू वगैरह सभी एक खास आंगल-मुस्लिम समन्वय के वातावरण में पढ-लिख कर विकसित हुए लोगों ने मुल्ला मोल्वियों की तरफ ध्यान नहीं दिया। एक खास साहित्य और विचारधारा की ओर मुस्लिम जन्ता को प्रभावित भी किया। लेकिन 21वीं सदी का मुसलमान उन्हें याद नहीं करता। क्योंकि वह धर्म को अफीम नहीं मानता।

परिणाम

यह ब्रिटिश राज की अल्पसंख्यक नीति ही है कि आज भारत का कोई भी हिन्दू बडे गर्व के साथ यह स्वीकार कर लेता है कि उसका अपने धर्म से कोई लेना-देना नहीं। शायद इसलिए कि साम्यवाद का पोषण करने वालों में हिन्दुओं की संख्या अधिक है। यह उसी नीति का परिणाम है कि आज उत्तर पुर्व, दक्षिण पश्चिम में इसाईयत तेजी से फैल रही है। आजादी के बाद अब तक आंध्रप्रदेश, नागालैंड, मिजोरम, मेघालय, मणिपुर, गोवा, और छत्तीसगढ में जन्ता ने मुख्यमंत्रियों के पद पर कई बार इसाईयों को बैठाया है।

यह ब्रिटिराज की अल्पसंख्यक नीति का ही परिणाम है कि भारत के सूचिबध्द धार्मिक अल्पसंख्यकों मुसलमान, सिख, पारसी, जैन, बौध्द और भाषायी अल्पसंख्यकों तेलगू, तमिल, गुजराती, कश्मीरी स्वतंत्रता से और शांतिपुर्वक सुरक्षित जीवन-यापन कर रहे है। लेकिन हिन्दू दलितों की एक बहुत बडी

आबादी इसाईकरण का शिकार हो रही है तो दूसरी तरफ हिन्दू धर्म से जुडी हुई गतिविधियों को अमेरिका में बैठे राजीव मल्होत्रा जैसे हिन्दू संस्कृति और राजनीति के विशेषज्ञ भी हिन्दूफोबिया (HINDUPHOBIA) का नाम ले रहे हैं। यह वैश्विक धरातल पर अल्पसंख्यकों के तुष्टिकरण का मामला है।

समस्या यह है कि भारत की वैश्विक छवि को आज ब्रिटिश उपनिवेश के रूप् में रेखांकित किया जा रहा है। और भारत की मजबूरी है कि वह कभी तो कॉमन वेल्थ का सदस्य होने के नाते तो कभी संयुक्त राष्ट्र संघ का समर्थक होने के नाते अपनी कोई अलग छवी इसलिए नहीं बना पा रहा है कि अल्पसंख्यकवाद का पालन पोषण करते हुए यह संभव नहीं है।

बी एन शर्मा